वाताग्र (Fronts)

जब किसी भूभाग में दो विभिन्न भौतिक गुणों वाली वायु राशियाँ, जिनके तापमान, वायु दाब एवं आर्द्रता आदि में पर्याप्त अन्तर विद्यमान रहता है, एक दूसरे के निकट आ जाती है, तब वे एक दूसरे के साथ पूर्ण रूप से नहीं मिल पातीं। उन के मध्य कुछ समय के लिये 'असातत्य पृष्ठ' (surface of discontinuity) का निर्माण हो जाता है। यह पृष्ठ ढालुआँ होता है। इस प्रकार दो परस्पर विरोधी वायु राशियों के मध्य निर्मित ढालुआँ सीमा सतह को 'वाताग्र' (front) कहते हैं। इन वाताग्रों पर शीतल और सघन वायु-पुंज गर्म और हल्की वायु राशि को ऊपर उठा देता है, क्योंकि वायु राशियाँ त्रिविस्तारीय (three dimensional) होती हैं, अतः उनको पृथक् करने वाले वाताग्र भी त्रिवितारीय होते हैं और उनमें क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाधर दोनों विस्तार पाये जाते हैं।

इन त्रिविस्तारीय वायु राशियों को ऊर्ध्वाधर तल (vertical plane) में पृथक् करने वाले तल को वाताग्र पृष्ठ (frontal surface) कहते हैं। यह पृष्ठ वास्तव में गणितीय पृष्ठ नहीं होता। वायु राशियों के मध्य में सदैव एक संक्रमण क्षेत्र (transition zone) पाया जाता है जिसकी चौड़ाई उसके दोनों ओर उपस्थित वायु राशियों के गुणों में अन्तर पर निर्भर करती है। वायु राशियों के तापमान एवं आर्द्रता में जितना अधिक अन्तर होता है, उनके संक्रमण क्षेत्र में उतना ही कम मिश्रण हो पाता है। अतः संक्रमण क्षेत्र उसी अनुपात में कम चौड़ा होता है। मानचित्रों पर प्रदर्शित वाताग्र धरातल तथा वाताग्री सतह के कटान विन्दुओं को प्रदर्शित करते हैं। अतः ऋतुमानचित्र पर वाताग्र को एक पृथक्करण रेखा के रूप में ही दिखाया जाता है। स्मरण रहे कि वाताग्र अथवा वाताग्र पृष्ठ त्रिविस्तारीय होते हैं तथा उनमें झुकाव पाया जाता है। यह भी उल्लेखनीय है कि इन सँकरी सीमान्त पेटियों में मौसम के विभिन्न

तत्वों में तीव्र गति से परिवर्तन दिखाई पड़ता है। इस प्रकार इन वाताग्री क्षेत्रों के आरपार मौसम के विभिन्न घटकों में तीव्र एवं आकस्मिक परिवर्तन इनकी मुख्य विशेषता मानी जाती है।

सामान्य विशेषतायें (General Characteristics)

तापमान—प्रत्येक वाताग्र के आरपार वायु के तापमान में भारी अन्तर पाया जाता है। तापमान में परिवर्तन कभी आकस्मिक, तो कभी क्रमिक होता है। वाताग्र के आरपार स्थित वायु राशियों के तापमान में अधिक अन्तर होने पर ही वाताग्र पर तापमान में आकस्मिक परिवर्तन सम्भव है। वाताग्रों पर शीतल एवं सघन वायु राशि के ऊपर उष्ण वायु राशि के आरोहण के फलस्वरूप सदैव तापमान व्युत्क्रमणता (temperature inversion) पायी जाती है।

वायु दाब—साधारण तौर पर किसी एक वायु राशि में समदाब रेखायें समवक्र होती हैं और उनमें तीव्र मोड़ नहीं उत्पन्न होते। किन्तु वाताग्रों पर वायुदाब-प्रवणता में आकस्मिक परिवर्तन के कारण समभार रेखाओं में तीव्र मोड़ (sharp bends) उत्पन्न हो जाते हैं। वाताग्रों को पार करते समय समदाब रेखायें अनिवार्य रूप से निम्नदाब की ओर मुड़ जाती हैं। इस प्रकार के झुकाव से समदाब रेखाओं के द्वारा जिस स्फान (wedge) का निर्माण होता है वह उच्च दाब की ओर इंगित करता है। ज्ञातव्य है कि वाताग्र सदैव अल्पदाब द्रोणिका (trough of low pressure) में ही स्थित रहता है।

वाताग्र प्रदेशों में वायु दाब प्रवणता में आकस्मिक परिवर्तन के कारण पवनों की दिशा में भी तदनुसार परिवर्तन हो जाता है। पहले मौसम वैज्ञानिक वाताग्रों को वायु विस्थापन रेखायें (windshift lines) कहा करते थे।

मेघ एवं वर्षण—वाताग्रों पर गर्म हवा के ऊपर उठने के कारण उनका रुद्धोष्म शीतलन (adiabatic cooling) हुआ करता है। अतः वाताग्री प्रदेशों में आकाश में सदैव मेघाच्छादन पाया जाता है जिनसे अनुकूल परिस्थितियों में वर्षण (precipitation) भी होता है। मेघों तथा उनसे होने वाले वर्षण का प्रकार वाताग्र की ढलान (slope) तथा आरोही वायु में आर्द्रता की मात्रा पर निर्भर करता है।

वाताग्रजनन एवं वाताग्रक्षय (Frontogenesis and Frontolysis)—वाताग्रजनन (frontogenesis) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम **टी. बर्गरान** ने नए वाताग्रों के निर्माण के लिये किया था, किन्तु कुछ कालोपरान्त पूर्व निर्मित वाताग्रों के पुनर्नवीकरण (regeneration) की क्रिया को भी इसमें सम्मिलित कर लिया गया। इस प्रकार वाताग्रजनन का अर्थ होता है 'नए वाताग्रों का निर्माण' अथवा 'क्षीणप्राय वाताग्रों का पुनः शक्तिशाली अथवा सक्रिय हो जाना'। 'फ्रॉन्टोजेनेसिस' लैटिन भाषा के शब्दों से बना है जिसका मूल अर्थ होता है 'वाताग्र निर्माण'। इसके विपरीत, 'वाताग्रक्षय' (frontolysis) से तात्पर्य है 'वाताग्रों का निर्बल हो जाना' अथवा 'पूर्णरूप से विघटित हो जाना'। 'फ्रॉन्टोलाइसिस' लैटिन तथा ग्रीक शब्दों के मेल से बना है, जिसका अर्थ होता है 'वाताग्र विघटन'। इस सम्बन्ध में ज्ञातव्य है कि विभिन्न वायु राशियों के मध्य वाताग्रों की उत्पत्ति अथवा उनका विघटन कोई आकस्मिक क्रिया नहीं होती। वास्तव में अनेक प्रक्रियाओं के कुछ समय तक निरन्तर क्रियाशील रहने के फलस्वरूप ही इनकी उत्पत्ति अथवा विघटन सम्भव होता है।

वाताग्रजनन के लिये आवश्यक होता है कि प्रचलित पवनों के द्वारा विभिन्न घनत्व वाली वायु राशियाँ वाताग्र रेखा पर एक दूसरे के निकट लायी जायें। इन वायु राशियों के तापमान में विषमता वाताग्रजनन की दूसरी महत्वपूर्ण शर्त है। वाताग्रों के निर्माण के लिये इन दोनों शर्तों का एक साथ पूरी होना नितान्त आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, दो विभिन्न तापमान एवं घनत्व वाली वायु राशियों के अभिसरण (convergence) से वाताग्रजनन होता है। किन्तु जब दो विभिन्न वायु राशियों का प्रवाह इस प्रकार का होता है कि वे एक दूसरे से दूर हट जाती हैं अथवा जब समीपस्थ वायु राशियों के तापमान का अन्तर किन्हीं कारणों से समाप्त हो जाता है, तब वाताग्रों का विघटन अथवा पूर्वनिर्मित वाताग्रों का क्षय होने लगता है।

बायर्स के अनुसार वाताग्रजनन के लिये उपर्युक्त दोनों आवश्यक दशाओं का एक साथ क्रियाशील होना आवश्यक होता है। किन्तु वाताग्र विघटन के लिये इनमें से किसी एक का अभाव ही पर्याप्त होता है। धरातल पर ऐसे क्षेत्रों में जहाँ तापक्षेत्र (temperature field) संकेन्द्रित होता है, वाताग्रजनन की प्रक्रिया पायी जाती है। वायु राशियों के उत्पत्ति क्षेत्रों के किनारों अथवा महाद्वीपों के तटवर्ती क्षेत्रों के पास ऐसी अनुकूल परिस्थितियाँ पायी जाती हैं।

बायर्स के ही अनुसार वाताग्र-निर्माण वहीं होता है जहाँ चक्रवातीय वायु विस्थापन (cyclonic windshift) अथवा चक्रवातीय वायु कर्तन (cyclonic wind shear) पाया जाता है। इसके विपरीत, प्रतिचक्रवातीय वायु-कर्तन क्षेत्र में वाताग्रों का निर्माण कदापि सम्भव नहीं होता। अधिकांश वाताग्रों का निर्माण निम्न वायु दाब द्रोणियों से सम्बद्ध होता है।

वाताग्रों की संरचना (Structure of Fronts)

वाताग्री ढाल—वाताग्री पृष्ठ धरातल के साथ घर्षण तथा पृथ्वी के आवर्तन से उत्पन्न कोरियालिस बल के कारण कभी भी पूर्णरूप से समतल नहीं होता, बल्कि उसमें कुछ झुकाव आ जाता है। साधारण तौर पर शीत वाताग्रों (cold fronts) का ढाल 1 : 30 से 1 : 100 तथा उष्ण वाताग्रों (warm fronts) का ढाल 1 : 100 से 1 : 400 होता है। टेलर के मतानुसार एक स्थिर वाताग्र का ढाल उसके दोनों ओर स्थित वायु राशियों के तापक्रम तथा वाताग्र के समानान्तर उनके वेग पर निर्भर करता है। उच्च अक्षांशों में वाताग्रों का ढाल तीव्र होता है, पवनों के वेग में अन्तर अधिक होने पर भी ढाल तीव्र होता है; तथा वायु राशियों के तापमान में अन्तर कम होने पर वाताग्री ढाल की तीव्रता में वृद्धि हो जाती है। वायु राशियों का तापमान समान हो जाने पर वाताग्र पृष्ठ लम्बवत् हो जाता है।

वाताग्रों की तापीय संरचना—पूर्ण विकसित वाताग्रों में ऊँचाई में वृद्धि के साथ ही वाताग्री परत का तापमान बढ़ता जाता है। साधारण प्रकार की तीव्रता वाले वाताग्री परतों में तापमान प्रत्येक ऊँचाई पर लगभग स्थिर बना रहता है। किन्तु दुर्बल वाताग्रों में ऊँचाई में वृद्धि के साथ तापमान में गिरावट पायी जाती है। पेटर्सन[1] के अनुसार वाताग्री परत में तापह्रास दर वाताग्र के दोनों ओर की वायु राशियों की अपेक्षा कम होती है, जिसके फलस्वरूप ऊष्मा एवं आर्द्रता विनिमय में वाताग्रों के द्वारा रुकावट पड़ती है। अतः वाताग्री पृष्ठ के नीचे स्थित शीतल वायु राशि द्वारा ग्रहण की गई ऊष्मा एवं आर्द्रता शीतल वायु के स्फान में ही फैल जाती है। उसका थोड़ा सा अंश ही वाताग्र में से होकर ऊपर पहुँच पाता है। इस प्रकार वाताग्रों के द्वारा पृथक् की गई शीतल एवं उष्ण वायु राशियों के बीच ऊष्मा तथा आर्द्रता का विनिमय स्वतंत्र रूप से नहीं हो पाता।